# सुख के दिन

जयश्री रॉय

# सुख के दिन

मुर्गे की पहली ही बाँग पर रघुनाथ की आँखें खुल गई थीं। रैली में जाने की उत्तेजना में वह पूरी रात ठीक तरह से सो नहीं पाया था। देर रात तक गाँव के चौपाल पर पार्टी की

https://www.hindiadda.com/sukh-ke-din/

मीटिंग चलती रही थी। स्थानीय नेता उन्हें दिनभर का कार्यकम समझाते रहे थे। उनके बीच बैठा रघुनाथ उनकी बातें सुनकर अनजाने ही ऐंठने लगा था। अब उनका जमाना आ रहा है। अपने हड़ियल हाथों की मुट्ठियाँ उसने कसकर बाँध ली थी। सच है भाई, पाँच मिलकर ही एक मुट्ठी बन पाती है, इसी में ताकत है। अलग-अलग रह कर हमने खूब दुख उठाए, अब एक होकर सुख भोगेंगे... सुख की कल्पना उसकी आँखों में झिलमिला उठी थी। उसने अपने पसीने से चिपचिप हो रहे फटे बनियान को पेट से ऊपर उठाया था। सर पर लहराते पीपल की हथेलियों ने जैसे चँवर-सा डुलाया था। ठंडी हवा में देह के रोएँ थियरा उठे थे। जेठ की गहरी उमस जाती रही थी।

वह अपने घुटनों में थुथनी धँसाए बलराम बाबू का ओजस्वी भाषण सुन रहा था। कल राजधानी में विधान सभा भवन के सामने उनकी पार्टी का शक्ति पदर्शन होगा। सभी को इसमें भारी संख्या में उपस्थित रहकर इस कार्यकम को सफल बनाना है। सभी को दिखा देना है कि जिन्हें वे आज तक अपने पैर की धूल समझते आ रहे थे, वे लोग अपने पर आ जाए तो क्या नहीं कर सकते हैं। अब उन्हें किसी की करुणा नहीं चाहिए। वे अपना भाग्य विधाता स्वयं बनेंगे।

सुनते हुए रघुनाथ के रोंगटे खड़े हो गए थे। आधी रात के बाद मीटिंग खत्म हुई तो तेज भूख और थकान के बावजूद वह मुर्गे की तरह अकड़ते हुए अपने घर पहुँचा। अब उसे अपनी सही शक्ति का भान होने लगा था। उसके दुबले बाजू उत्तेजना में फड़क रहे थे। घर के बाहर आँगन में तीनों बच्चे चटाई बिछाकर सो रहे थे। मारे गर्मी के घर के भीतर रहा नहीं जाता था। ढिबरी बुझी हुई थी। दूसरे पहर का चाँद खपरैल के पीछे चला गया था। उसी की हल्की नीली उजास में फूलन उनींदी-सी पड़ी हुई थी। पति की आहट सुनकर वह उठ बैठी थी।

पति के सामने रोटी सालन की थाली रखते हुए उसने अपने छोटे बेटे के सर पर हाथ फिराया था - 'मनुआ को बहुत ताप आ रहा है, दोपहर से बेसुध पड़ा है। तुमरी रास्ता देख रहे थे। तनी जल्दी आ जाते तो डिस्पेंसरी में डागदरबाबू को दिखला लाते...' अपनी पत्नी की बातें रघुनाथ तक नहीं पहुँच रही थीं। वह तो कल की रैली और उसके बाद आनेवाले उनलोगों के सुखभरे दिनों के सपनों से भरा बैठा था। खाते-खाते वह उसे आज की मीटिंग की बाते उत्साह से सुना रहा था। फूलन को उसकी सारी बातें समझ में नहीं आ रही थी। मन बीमार बेटे को लेकर बाझिल हो रहा था। फिर भी अपने पति को बातों के बीच में टोकना उसे उचित नहीं लगा। बहुत दिनों बाद रघुनाथ इतना खुश दिख रहा था। इतने बड़े-बड़े लोग जब कह रहे हैं तो हो सकता है, उनकी बात सच ही हो

- उनके अच्छे दिन आनेवाले हो... उसने मन-ही-मन देवी-देवताओं को स्मरण करके प्रणाम किया था।

चाहे बड़ी-बड़ी बातों से रघुनाथ कितना भी प्रसन्न क्यों न हो, मगर दो रोटियों से उसका पेट का कुआँ भर नहीं सकता था। फिर भी माँगने पर जब फूलन ने खाली भगौना दिखा दिया तो वह दो लोटा पानी गटककर उठ गया। ऐसी छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने का समय यह नही हैं। सामने एक सुनहरे भविष्य की वृहत्तर योजनाएँ पड़ी हैं और उनपर एकजुट होकर काम करने की आवश्यकता है। नए युग का नया सबेरा उन जैसे लोगों के लिए सुनहरे किरणों का हार लिए स्वागत में दरवाजे पर आ खड़ा हुआ है। और विलंब नहीं किया जा सकता।

बाहर का आँगन नीम के झरते सफेद फूलों और निबौलियों से पटा पड़ा था। अंतिम पहर की झिरझिरी हवा में हल्की ठंडक-सी आ गई थी। तुलसी चौरे के पास चटाई बिछाकर वह भी लेट गया था। फूलन मनुआ के सरहाने बैठकर उसके सर पर पानी से भीगी पटिटयाँ रखती रही थी। उसका बुखार बढ़ता ही जा रहा था। रघुनाथ कल की रैली के विषय में सोचते हुए सुबह होने से थोड़ी देर पहले ही सो सका था शायद।

...मुर्गे की बाँग पर वह मुँह अँधेरे उठा तो देर रात की जगार से उसकी आँखें करकरा रही थीं। पपोटे पसारने में भी जैसे उसे तकलीफ हो रही थी। बाहर ओसारे में आकर उसने चहबच्चे से पानी लेकर चेहरे पर छपाका लगाया तो आँखें एकदम से जल उठीं। पूरब में आकाश लाल हो रहा था। नीम की डालों पर कौए बोलने लगे थे। बाहर की गली मवेशियों के गले में बँधी घंटियों की टनटनाहट से भर गई थी। रसोई से धुआँ निकल रहा था। फूलन ने अँगीठी सुलगा ली थी। थोड़ी देर बाद वह काँसे की कटोरी में गुड़ की काली चाय रख गई थी। घर में काँसे का यही आखिरी बर्तन बचा था। परसों फूलन माँगेलाल की दुकान पर काँसे की बड़ीवाली कलशी बेच आई थी। उसीके पैसे से घर में दो दिन का राशन आया था। आजके खाने का बंदोबस्त कहाँ से होगा, वह नहीं जानती थी। रघुनाथ दिनभर के लिए घर से निकल रहा था, मगर वह उसके सामने कलेवा नहीं रख पाई थी। रघुनाथ ने भी कुछ नहीं माँगा था। आज उनके खाने-पीने का प्रबंध पार्टी की तरफ से होनेवाला था, इसलिए वह उस तरफ से निश्चिंत था। वह जल्दी-जल्दी अपनी सबसे अच्छीवाली धोती और शर्ट पहनकर तैयार हो गया था। कल ही फूलन से कहकर उसने अपनी यह शर्ट सोडा से उबलवा कर धुलवाई थी। अधिक घिसने-पटकने से यह एक बगल से फट गई थी। उसे अचानक चिंता हुई थी, वह अब हाथ उठाकर 'जिंदाबाद' कैसे करेगा! फिर उसे यह तरकीब सूझी थी कि वह अपना बायाँ हाथ उठाकर नारे लगा लेगा। भीड़ में इतना कौन ध्यान देता है भला।

सर पर बेटी के गुलाबी दुपट्टे को उसने पगड़ी की तरह लपेट लिया था। झुकी हुई मूँछों पर कड़वा तेल लगाकर उन्हें सतर करने की कोशिश की थी। अब चेहरे पर जरा-सा रोब आ गया लग रहा था।

बाहर मंदिर के पास सबको रैली में ले जाने के लिए आई हुई गाड़ियाँ इकट्ठी होकर हार्न बजाने लगी थीं। रघुनाथ ने फूलन के पास कुछ पैसे हैं या नहीं पूछा था। वैसे तो उनका खाना-पीना, यात्रा - सभी कुछ पार्टी पर था, मगर इतनी दूर शहर जा रहे हैं तो हाथ में कुछ होना भी जरूरी था। कलशी बेचकर अनाज लाने के बाद जो दस रुपए बचे थे, वह फूलन ने अपने आँचल के खुँट से खोलकर उसे चुपचाप दे दिए थे। पैरों में टायर के रबर से बनी चप्पलें डालकर रघुनाथ हाथ में अपनी लट्ठ उठाकर बाहर निकल गया था। दरवाजे पर फूलन चुपचाप खड़ी रह गई थी। मनुआ का बुखार अभी तक उतरा नहीं था। वह आग का गोला बनकर बिस्तर पर पड़ा था। पति की व्यस्तता देखकर वह उससे कुछ चाहकर भी बोल नही पाई थी। थोड़ी देर बाद चाय की कटोरी लेकर वह बेटे के पास जा बैठी थी। मगर लाख हिलाने-डुलाने पर भी मनुआ अपनी आँखें नहीं खोल पाया था। तेज बुखार में वह रह-रहकर बड़बड़ा रहा था। किसके पास जाकर वह मुट्ठीभर अन्न माँगकर ले आए यही सोचती हुई फूलन अपने बेटे के सरहाने पर बैठी रह गई थी। छोटा गोद पोंछुवा भुवन भी अब नींद से उठकर रोने लगा था। उसे जोरों की भूख लग रही थी। कल शाम के बाद उसने कुछ खाया नहीं था। बड़ी बेटी उसे चुप कराने के बजाय स्वयं मुँह बनाकर बैठ गई थी। उसने कल कब खाना खाया था, उसे याद नहीं आ रहा था।

रघुनाथ मंदिर के पास पहुँचा तो गाड़ियाँ छूटने-छूटने को हो रही थीं। लोग गाड़ियों में भेड़-बकरियों की तरह ठुँसे हुए थे। छत पर भी बैठे हुए थे और खिड़की-दरवाजों पर भी लटके हुए थे। रघुनाथ अकबकाया हुआ-सा दौड़-दौड़कर अपने लिए गाड़ियों में जगह ढूँढ़ रहा था, मगर कहीं तिल धरने की भी जगह नहीं थी। गाड़ी चल पड़ी तो मोहन ने उसे कॉलर से पकड़कर ऊपर खींच लिया। वह खुद दरवाजे के पास किसी तरह खड़ा था। आनन-फानन में रघुनाथ ने पायदान में अपने एक पैर का पंजा टिकाकर खिड़की की हैंडिल पकड़ ली थी। उसके बाएँ हाथ में लाठी थी और चेहरा मोहन की काँख में धँसा हुआ था। थोड़ी ही देर में पसीने की खट्टी महक से उसका दम घुटने लगा तो उसने हड़बड़ाकर अपना सर बाहर निकाल लिया। सर के बाहर निकलते ही उसकी नजर पीछे की तरफ पड़ी। चारों तरफ से पार्टी के झंडों-बैनरों से सजी दस-बारह गाड़ियाँ एक लाइन में चली आ रही थी। लोग उत्साह से भरकर अपने नेताओं और पार्टी की जय-जयकार कर रहे थे। वह स्वयं को भुलाकर मंत्र-मुग्ध-सा वह अद्भुत

दृश्य देखता रह गया था। भावना के अतिरेक में उसकी आँखों में आँसू आ गए थे - सच, अब उनके अच्छे दिन अवश्य आएँगे।

अब उन्हें आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता। एकजुट होकर वे कोई भी बड़ा-से-बड़ा काम कर सकते हैं, हवा का रुख बदल सकते हैं, नदियों का मुँह मोड़ सकते हैं... वे बहुजन हैं तो देश भी उन्हीं का हुआ, सरकार भी उन्हीं की होनी चाहिए। रघुनाथ का जी तो बहुत कर रहा था कि वह भी अपने नेताओं का नाम ले-लेकर हवा में मुट्ठियाँ लहराकर उनकी जय-जयकार करे, मगर एक तो उसकी कमीज का बगल फटा हुआ था, दूसरा बाएँ हाथ की छह फुट की लाठी कई बार हवा में उछालकर उसका हाथ भी दुखने लगा था। खिड़की की हैंडिल पकड़े-पकड़े दूसरा हाथ भी अब तक सुन्न हो आया था। तेज हवा में पगड़ी भी आधी खुलकर एक आँख पर ढलक आई थी, जिसे बार-बार ठीक करना उसके लिए कठिन हो रहा था। धूल भरी गर्म हवा से बचने के लिए उसने आँखें भी मिचमिचा रखी थीं। इसी माहैल में सभी एकसाथ और लगातार बोले जा रहे थे। हवा में पसीने के साथ खैनी-तंबाकू की गंध भरी हुई थी। कुल मिलाकर भाईचारा और जातीय एकता का एक बहुत ही सौहार्दपूर्ण वातावरण बना हुआ था।

...यह सब कुछ रघुनाथ को बहुत अच्छा लग रहा था। उसे लग रहा था, आज वह अकेला नहीं है, उसके बंधु-बाँधव उसके साथ हैं। जो अकेले के लिए बोझा होता है वही पाँच के हाथों पहुँचकर लाठी - ताकत बन जाती है। नेताजी समझाते रहे - तुम अपढ़ हो, अज्ञानी हो, आपसी फूट से भरे हुए हो... तभी तो समाज के मुट्ठीभर लोग तुम्हें अपना दास बनाए हुए हैं। अपनी ताकत को पहचानों, एकजुट हो जाओ, फिर देखो - ये देश तुम्हारा, पूरी दुनिया तुम्हारी! शपथ उठाओ, अब और अन्याय नहीं सहना, गुलामी नहीं करनी... तुम अपना भाग्य विधाता स्वयं बनो! ...उठो! जागो!!

किसी के कान पर जोरदार छींकने से रघुनाथ अकबकाकर अपनी दिवानिद्रा से जाग उठा था। चारों तरफ की गहमा-गहमी जारी थी। आसपास से और भी हजारों लोग बस, ट्रक, बैलगाड़ियों में भर-भरकर शहर की ओर चले जा रहे थे। चारों तरफ नेताजी के बड़े-बड़े पोस्टर लगे थे। पाँच साल पहले जब नेताजी आए थे तब कितने दुबले-पटके थे। भाषण करते मुँह से फेन निकलता था। अब तो भगवान की दया से बहुते मोटा गए हैं, गर्दन-गला मिलकर एक हो गया है। गरीब लोगन के लिए लड़-लड़ाकर भी इतनी अच्छी सेहत बन गई है... ऐसे नेक इनसान पर रामजी की किरपा होती है, और क्या! वह पोस्टर पर अपने गदबदाए गालों से मुस्कराते हुए नेता जी को हाथ जोड़कर प्रणाम करना चाहता था, मगर परिस्थिति के लिए मन मसोसकर रह गया - दोनों हाथ बँधे थे। उस दिन पगला राधे पार्टी का पोस्टर दिखाकर कह रहा था - बता, इसमें तुमरी

नेता कौन और हाथी कौन? उसने उस चपरकनाती को कसकर एक गर्दनिया लगाया था - बुरबक, ई का सवाल है, हमरी नेताजी का सूँड़ है कोनो... इतना भी बुझता नहीं है तुमको!

जब भी कोई गाँव-कस्बा करीब आता, वह भी दूसरों के साथ मिलकर अपने नेताजी की जय-जयकार करने लगता। चढ़ती धूप के साथ लगातार चिल्ला-चिल्लाकर आखिर उसका गला बैठ गया था। अब तो बड़ी कठिनाई से वह चिचियाकर 'जय' ही बोल पा रहा था। कोई ज्यादा ताव दिलाता तो टर्रा भर देता। थोड़ी देर बाद उसका ये टर्राना भी बंद हो गया। जीभ काठ का बनकर मुँह में सूज रहा था। आसपास के लोग भी अब तक पस्त होने लगे थे। अब सब चुपचाप ऊँघते हुए-से यात्रा कर रहे थे। रघुनाथ भी ऊपर की ओर मुँह खोले सो गया था। बीच-बीच में स्थानीय नेता उन्हें घुड़कते तो वे जरा-सा सचेत होकर दो-चार बार 'जय-जय' करके फिर ऊँघ जाते। थोड़ी देर बाद नेताजी भी सबका उत्साहवर्धन करना स्थगित कर एक तरफ गर्दन ढीली छोड़कर नाक बजाने लगे थे। बीच-बीच में हिचकोलों से चौंककर वे अपने गाल तक बह आई लार को जोर से सरपते और फिर कुछ बुदबुदाते हुए झूमने लगते। चारों तरफ हवा-बतास भी जैसे मारे गर्मी के सीझ गया हो। सामने कोलतार की सड़क धुआँने लग पड़ी थी।

एक बार रघुनाथ ने हिम्मत करके पूछ ही डाला कि क्या कुछ पानी-वानी का प्रबंध नहीं हो सकता। नेताजी ने आश्वासन दिया कि शहर पहुँचते ही हर चीज का बंदोबस्त किया जाएगा। वे जरा धीरज धरें। सभी धीरज धरने के प्रयास मे और अधीर होने लगे थे।

अब वे शहर में दाखिल होने लगे थे। गाँव के लोग शहर की ऊँची ईमारतों, चौड़ी सड़कों और जगह-जगह स्थापित अपने नेताजी के भव्य-विशाल प्रतिमाओं को आश्चर्य और प्रसन्नता से मुँह फाड़े देख रहे थे। उनकी पार्टी का चुनाव चिह्न हाथी की भी बड़ी-बड़ी संगमरमर की मूर्तियाँ चारों तरफ लगी हुई थीं। ये सब देखकर रघुनाथ के साथ-साथ उसके साथ के लोग भी भाव-विह्वल हो उठे। अपनी प्यास और थकान भूलकर वे और भी जोर से अपने नेताजी की जय-जयकार करने लगे। रघुनाथ की तो मारे खुशी के आँखें ही छलछला उठ थीं - इ तो एकदमे सरग बन गया है! ...बड़े-बड़े बाग-बगीचे, मूर्तियाँ, भव्य मंडप... सच है भाई, हमरे सुख के दिन तो अब आ ही गए हैं! दूसरे लोग तो बस झोंपड़ी-टट्टी बनवाने का ही आश्वासन देते हैं, मगर हमार नेता जी तो इंद्रपुरी ही बनवाय दिए हैं हम गरीब लोगन के लिए... बगल में बैठा बलराम भी मारे खुशी के बंदर के माफिक दाँत निपोरकर खिखिया रहा था - देख लो रघुनाथ भैया! इ है अपना

राज! सब कुछ हमार-तोहार के वास्ते... रघुनाथ उसकी बातपर सुग्गे की तरह गर्दन हिला रहा था।

'और तो और, हमरे नेताजी भी किसी से कम नहीं, अपने भाई-बंधुओं के पैसे से एकदम महल जइसन घर बनवा लिए हैं, किसी दूसरे से एक कानी-कौड़ी तक नहीं लिए हैं - स्वाभिमान का सवाल है भइया!' 'और नहीं तो क्या...' परमेसर ने जोग लगाया - 'दूसरी जाति के नेता-मंत्री लोग जब ठाठ से रहेंगे तो हमार नेताजी कुछो कम पड़ेंगे का! अरे रघुआ, उनका ऐसा प्रेम हमलोगन के लिए कि सबको न्योता था गृह पबेश के दिन - देखने के लिए, आसीरवाद देने के लिए... हम तो भइया हृदय खोलकर असीसे... खूब सुख से जीए हमार नेताजी, गरीब लोगन का राजा बनकर हाथी की सवारी करे!'

'हमलोगन के पयसे से महल बनवा लिए...' लछमन अपना सर खुजा रहा था - 'मगर चाचा, हमरे पास इतना धन कब रहा कि कोई उससे महल बनवा ले... हम तो आज तक अपने पैसे से एक ढंग की झोंपड़ी तक न बना सके...' लछमन हिसाब-किताब में हमेशा कच्चा था, इसलिए आँकड़ों के तिलस्म में उलझा हुआ था। उजबक की तरह मुँह खोले अपना सर खुजा रहा था।

'अरे तू नहीं समझेगा मूढ़मति! हमरे नेताजी तो जादूगर हैं, जादूगर! जैसे रेत निचोड़कर तेल निकाला जाता है, वैसे ही वे हम कंगालों की हड्डी निचोड़कर पैसा निकाल सकते हैं। अब तुम ही देख लो, 'हम जिनगी भर पैसा नहीं, पैसा नहीं' का राग अलापते रहे और हमरी नेताजी हमरी ही फटी जेब से पैसा निकालकर महल खड़ा कर लिए... है न माननेवाली बात, नहीं, तनिक सोचकर बताओ! सुच्छे थोड़े न लोक-जहान उनकी जय-जयकार कर रहे हैं।'

'इ तो तुम ठीक ही कह रहे हो भइया!' रघुनाथ की बंद खोपड़ी में अब कुछ-कुछ बातें आने लगी थी। मगर कुछ बातें अभी भी उसे परेशान किए हुई थीं - 'इतना बड़ा महल-बगीचा बना लिए नेताजी, हम गरीबन के लिए भी तनी झोंपड़ी-पानी का प्रबंध कर देते...' 'अरे लो, इस मूरख की बतिया सुनो कोई! पार्टी के काम से हाल ही में मोटाने शुरू हुए नंदन बाबू ने रघुनाथ की बातें सुनकर अपना कपार ही पीट लिया था। 'जब इतना बड़ा-बड़ा काम का जिम्मा उठाए हैं नेताजी तो का अइसन छोटा-मोटा काम में मगज खपाएँगे... देखो फब्बारा - कैसा पानी बरस रहा है, देखकर ठंडक पड़ी न कलेजे में, जी जुड़ा गया न... चलो, और भी क्या-क्या दिखाते हैं तुमलोग को। छोटे आदमी छोटे ही रह गए जिनगी भर, अब कुछ बड़ा सोचो... वरना वहीं के वहीं रह

जाओगे! अउर वो देखो नेताजी का पुतला - पच्चीस करोड़ का! आज तक बना है किसी का इतना महँगा पुतला? यानी हमार नेताजी सब लोगन के नेता से बड़ा! छोटे लोग के नेता हैं, एके वास्ते सबसे बड़े नेता हैं। सबसे बड़ा नेता तो सबसे बड़ा पुतला! कोई हँसी-ठट्टा है का...' नंदन बाबू जोश में अपनी मूँछें ऐंठकर रस्सी की तरह बाँटे जा रहे थे।

अब रघुनाथ की समझ में इन भव्य योजनाओं की बात कुछ-कुछ आने लगी थी। सच, बड़े लोगन की लीला समझना कोनो आसान बात नहीं! उन जैसे बंद खोपड़ी लोगों को तो इन महान लोगों की बातों में सिर हिलाना अउर पीछे-पीछे चलना ही सुहाता है। गनेसी ने उसे आगे समझाया - 'अब समझो, यहाँ गर्मी में लू खायके हमको चक्कर आ गया तो इन बगीचों में हम सुस्ता सकते हैं, फब्बारे के पानी से ठंडा सकते हैं, फल-उल भी खा सकते हैं... शोभा निरखकर आँख जुड़ाएगा सो अलग... देखा जाइ तो सब हमरे लिए ही बनवाया गया है न!' 'इ बात भी ठीक है भइया...' अब रघुनाथ रुआँसा होने लगा था, नेताजी की महिमा उसे कुछ ज्यादा ही समझ में आने लगी थी।

गाड़ी से उतर कर अब वे विशाल जुलूस के रूप में विधान सभा भवन की तरफ बढ़ने लगे थे। चारों तरफ हजारों की संख्या में लोग थे। बैनरों और झंडों से पूरा आकाश ही जैसे भर गया था। लोग जोर-जोर से नारे लगा रहे थे। पुलिस का भी कड़ा प्रबंध था। हर गली, हर मोड़ पर वे मुस्तैदी से डटे हुए थे। लाउडस्पीकर पर लगातार घोषणाएँ की जा रही थी। नेताजी किसी भी समय पँहुचनेवाले थे। आकाश पर सूरज आग का गोला बना हुआ था। जमीन-आसमान फटा पड़ रहा था। चलते हुए पाँव में छाले-से पड़ रहे थे जैसे। सभी का प्यास और गर्मी से बुरा हाल हो रहा था। लोग अपनी-अपनी पगड़ी और गमछे से ओट कर रहे थे, पंखा झल रहे थे। लू से बचने के लिए जो प्याज का टुकड़ा रघुनाथ घर से ले आया था, उसे भूख के मारे पहले ही आधा चबा गया था। रैली घोंघे की चाल से आगे बढ़ रही थी, धक्का-मुक्की में एक-एक कदम आगे बढ़ाना कठिन हो रहा था। रघुनाथ की हालत खराब हो रही थी। भूख-प्यास और गर्मी से वह बेहाल हो उठा था। आँखों के आगे लाल-पीले सितारे नाचने लगे थे। हलक सूखकर काँटा हो रहा था, जीभ तालू से चिपक गई थी। बार-बार घोषणा की जा रही थी कि नेताजी किसी भी क्षण पहुँचनेवाले हैं। हेलिकॉप्टर में किसी तकनीकी खराबी की वजह से उनके आने में विलंब हो रहा था। चलते हुए बीच-बीच में लोग इधर-उधर त्योराकर गिर रहे थे। उनको उठाकर ले जाया जा रहा था। रघुनाथ को लग रहा था, अब वह भी गिर पड़ेगा गश खाकर, ज्यादा देर तक बर्दाश्त नहीं कर पाएगा। सूरज अब बिल्कुल सर पर था। हवा धुआँ बनकर लपटें मारने लगी थी।

तीन घंटे तक नेताजी के पधारने के विषय में आश्वासन देने के बाद आखिर उनके आने की पक्की सूचना मिली। चारों तरफ ढोल-तासे बजने लगे, पटाखे फूटने लगे, लोगों में भगदड़ मच गई। सर के ऊपर नेताजी का हेलिकॉप्टर किसी विशाल दैत्य की तरह गर्जन करते हुए चक्कर काट रहा था। उसके तेज घूमते पंखों के कारण चारों ओर धूल का बवंडर उठ रहा था। लोग अपनी-अपनी पगड़ी और छाता सँभालते हुए भय और उत्सुकता से आँखें मिचमिचाते हुए ऊपर की ओर देख रहे थे। रघुनाथ भी जैसे पूरी तरह से बौरा उठा था। चारों तरफ भागते हुए लोगों के साथ वह भी भागने लगा था। ऐसा लग रहा था, जैसे जंगल में हाँका पड़ा हो - लोग भयभीत पशु की तरह दिशाहारा होकर भागते फिर रहे थे। और फिर न जाने अचानक क्या हुआ। दो-चार धमाकों की आवाज आई और फिर पुलिस ने लाठी चार्ज शुरू कर दिया। पुलिस लोगों को दौड़ा-दौड़ाकर मार रही थी। किसी का सर फूट रहा था तो किसी को कहीं और चोट लग रही थी। चारों तरफ कोहराम-सा मचा हुआ था। कुछ लोग भी न जाने कहाँ से पत्थर इकट्ठा कर-करके अब पुलिस पर फेंकने लगे थे। आँसू गैस के गोले भी लगातार छोड़े जा रहे थे। देखते-ही-देखते वह स्थान कुरुक्षेत्र में बदल चुका था। कहीं खून की धारा बह रही थी तो कहीं लोग जख्मी हुए पड़े तड़प रहे थे।

रघुनाथ यह सब जिंदगी में पहली बार देख रहा था। वह बुरी तरह से भयभीत हो उठा था। उसे सूझ नहीं रहा था कि वह घाँ जाए। बिना सोचे-समझे वह कभी इधर तो कभी उधर दौड़ रहा था। और फिर ठीक उसके सामने आँसू गैस फटा था। चारों ओर दमघोंटू धुआँ फैल गया था। अपनी आँखें रगड़ता हुआ वह जमीन पर बैठ गया था। उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। अभी वह उठने का उपक्रम कर ही रहा था कि उसकी पीठ पर दनादन लाठियाँ बरसनी शुरू हो गई थीं। वह दर्द से बिलबिलाकर चीख पड़ा था। मगर बरसती लाठियाँ रुकी नहीं थीं। वह जिबह होते जानवर की तरह दोनों हाथों से अपना सर पकड़े चिल्लाए जा रहा था। उसकी आँखों और मुँह में सर से बहता हुआ खून भर गया था। उसे लग रहा था, वह अपने ही खून में डूबकर मर जाएगा। दर्द से उसकी चेतना शून्य होती जा रही थी। बेहोशी की-सी अवस्था में उसे लगा था कि उसे कॉलर से पकड़कर घसीटा जा रहा है। और फिर उसे पुलिस बैन में अनगिनत लोगों के साथ ठूँस दिया गया था। बेहोश होने से पहले उसने देखा था, नंदन बाबू का चेहरा मार खाकर कोहरे जैसा सूज गया था, बाईं आँख भी बीट सरीखी बैंजनी होकर मुँद गई थी। ऐसी अवस्था में भी वह अपनी घुटी-घुटी आवाज में नेताजी की जय किए जा रहा था।

बाद में लोगों ने बताया था, नेताजी नीचे मची भगदड़ को देखकर बिना उतरे ही हैलिकॉप्टर घुमाकर वापस चले गए थे। उन्हें उसी शाम दिल्ली के किसी पाँच सितारा

होटल में आयोजित कार्यक्रम में गरीबों का उत्थान कैसे किया जा सकता है इस विषय पर भाषण करना था।

आधी रात के बाद ही रघुनाथ और उसके साथियों को हवालात से छुट्टी मिल पाई थी। वही पर उनकी दवा-दारू का प्रबंध भी किया गया था। रघुनाथ के सर पर भी पट्टी की गई थी। उसका दाहिना कंधा उतर गया था। पैरों पर भी कुछ चोटें आई थीं। थाने से बाहर निकल कर उन्हें दो-चार बासी-ठंडी पकौड़ियाँ ही खाने को मिली थीं। साथ में लोटाभर पानी पीने को मिल गया था, यही गनीमत है। पार्टी के लोग सब इधर-उधर बिखर गए थे। बड़ी मुश्किल से ढूँढ़-ढाँढ़कर उन्हें गाँव जाने के लिए एक गाड़ी मिल सकी थी। गाड़ी में नंदन बाबू रास्ते भर उन्हें बताते रहे थे कि अब वह लोग पुलिस की मार खाकर बहुत प्रसिद्ध हो गए हैं। दिनभर देश के हर टीवी चैनलों में उनको दिखाया जा रहा था। कहते हैं, रघुनाथ का तरबूज-सा फटा सर या बड़ा क्लोज अप करके टीवी में दिखाया गया था। अब तो तू एकदमे फेमस हो गया रे रघुआ... नंदन बाबू ने ईर्ष्या से भरकर उसके पट्टी बँधे सर पर ही तबला बजा दिया था। रघुनाथ मन-ही-मन खुश तो था, पर हँस नहीं पा रहा था। मुआ हवलदार ने जबड़े पर ऐसा हुमच कर घूँसा मारा था कि बड़ावाला दाँत ही हिल गया था!

भेड़-बकरी की तरह ठुँसकर जब वे किसी तरह अपने गाँव पहुँचे थे, सुबह होने ही वाली थी। चार-पाँच भौंकते हुए आवारा कुत्तों के साथ जब वह अपने घर पहुँचा तो आँगन का दरवाजा खुला हुआ पाया। अंदर आँगन में पास-पड़ोस के दो-चार लोग जमा थे। बीच में तुलसी चौरे के पास रखे मनुआ के शव के बगल में अपने दो बच्चों के साथ बैठी फूलन एक सुर में कुछ बड़बड़ाती हुई रो रही थी। उसकी अधमुँदी आँखों में आँसू नहीं थे। शायद वह अपनी आखिरी बूँद तक रो चुकी थी। दोनों बच्चों का भी यही हाल था। भूख और शोक की दोहरी मार ने उन्हें अशक्त बना दिया था। बहुत अधिक खून के बह जाने से तथा दिनभर की भूख-प्यास और थकान से निढाल रघुनाथ का सर चकरा रहा था। वह ठीक से खड़ा भी नहीं रह पा रहा था। दोनों हाथों में अपना सर थामें वह दरवाजे पर ही खड़ा रह गया था। उसकी समझ में जैसे कुछ भी नहीं आ रहा था। उसे देखकर फूलन उसके पास उठ आई थी और फिर रोते हुए बोली थी - 'आओ मनुआ के बापू, शहर गए थे न हमरी खातिर सुख के दिन लेवे के खातिर... इ देखो, आ गए हमरे सुख के दिन - मर गया हमरा बचवा, छोडकर चला गया हमको... इतना सुख अब हमसे कैसे सहेगा, बताओ...' कहते हुए वह रोते-रोते उसके पैर के पास अचेत-सी होकर गिर पड़ी थी। रघुनाथ बुत बना खड़ा रह गया था। वह क्या जबाव देता। पिछली दीवार पर पंखों को झटकते हुए कलगीवाला लाल मुर्गा अपनी गर्दन लंबी तानकर बाँग

देने लगा था। सुबह होने ही वाली थी। मगर इस समय रघुनाथ की आँखें खुली नहीं, बंद होने लगी थी। आज उसमें कल की तरह रैली का कोई उत्साह बचा नहीं रह गया था। उसने अपने सुख के दिन अच्छी तरह से देख लिए थे।